भारत का विधि आयोग

एक-सौ बारहवीं रिपोर्ट

विषय : बीमा अधिनियम, 1938
की धारा 45

... जून, 1985

9.542

अर्द्ध शा० सं० एफ० 2(2)/85-एल०सी०

न्यायमूर्ति के० के० मैथ्यू

नई दिल्ली-110001

तारीख 6 जून, 1985

प्रिय मंत्री महोदय,

मैं इसके साथ विधि आयोग की एक-सौ बारहवीं रिपोर्ट पेश करता हूं जो "बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 : असत्य कथन के आधार पर किसी पालिसी पर दो वर्ष के पश्चात् आक्षेप न किया जाना" के विषय में है।

विधि आयोग ने इस विषय पर स्वप्रेरणा से विचार किया है। इस विषय पर विचार करने की आवश्यकता को इस रिपोर्ट के पैरा 1.1 में स्पष्ट किया गया है।

इस रिपोर्ट को तैयार करने में श्री वेपा. पी० सारथी, अंशकालिक सदस्य और श्री एस० रमैया, सदस्य-सचिव, ने जो मूल्यवान् सहायता दी है उसके लिए आयोग उनका आभारी है।

सादर,

भवदीय,

ह०/-

(के० के० मैथ्यू)

श्री ए० के० सेन,
माननीय विधि और न्याय मंत्री,
नई दिल्ली।

संलग्न : एक-सौ बारहवीं रिपोर्ट।

349.54R
MS, 2
68636 (3)
11-12-85

विषय - सूची

पृष्ठ

अध्याय 1	प्रस्तावना	
अध्याय 2	बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 40 का विस्तार।	
अध्याय 3	धारा का कार्यकरण और उससे उत्पन्न होने वाली समस्याएं।	
अध्याय 4	अन्य देशों में स्थिति।	
अध्याय 5	कार्य संचालन पक्ष के बारे में प्राप्त आलोचनाएं।	
अध्याय 6	सिफारिशें।	

- - - - -

अध्याय 1

प्रस्तावना

रिपोर्ट का विस्तार।

1.1 इस रिपोर्ट में बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 की चर्चा की गई है। इस धारा में बीमाकृत व्यक्ति की जीवन बीमा पालिसी को निराकृत करने के लिए बीमाकर्ता के अधिकार की चर्चा है। इस धारा के कार्यकरण में कुछ कठिनाइयाँ मालूम हुई हैं और विधि आयोग ने हमारे देश की विधियों का पुनरीक्षण करने के अपने कृत्य के भाग के रूप में इसकी जांच करने का विचार किया है।

बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45।

1.2 बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 निम्नलिखित रूप में है :-

"<u>अशुद्ध कथन के आधार पर किसी पालिसी पर दो वर्ष के पश्चात् आक्षेप न किया जाना --</u>

किसी भी जीवन बीमा पालिसी पर, जो इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व की गई हो, इस अधिनियम के प्रारम्भ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् तथा किसी भी जीवन बीमा पालिसी पर, जो इस अधिनियम के प्रवर्तन में आने के पश्चात् की गई हो, उस तारीख से, जिसको वह की गई हो, दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी के द्वारा इस आधार पर कि बीमा प्रस्थापना में अथवा चिकित्सा अधिकारी की या निर्दिष्ट व्यक्ति या बीमाकर्ता के मित्र की रिपोर्ट में अथवा ऐसी किसी अन्य दस्तावेज में जिसके कारण वह पालिसी दी गई है, किया गया कथन अशुद्ध या मिथ्या है, तब के सिवाय आक्षेप नहीं किया जाएगा जब कि बीमाकर्ता यह दर्शित कर दे कि ऐसा कथन तात्विक बात के बारे में था अथवा उसमें ऐसे तथ्य छिपा लिए गए थे जिनको प्रकट

भागों में, प्रसार करने के लिए और लोक धन (पब्लिक सेविंग) को अधिक कारगर रूप से बढ़ाने की दिशा में आगे कदम उठाने के लिए किया था।[1] 1956 में संसद ने तदनुसार जीवन बीमा निगम अधिनियम पारित किया और जीवन बीमा निगम अधिनियम की धारा 43 बीमा अधिनियम की धारा 45 को जीवन बीमा निगम पर उसी प्रकार लागू करती है जिस प्रकार यह किसी दूसरी बीमाकर्ता पर लागू होती थी।

---

1. जीवन बीमा निगम अधिनियम, 1956 के उद्देश्यों और कारणों का कथन।

करना तात्त्विक था तथा वह पालिसीधारी द्वारा कपटपूर्वक किया गया था और ऐसा कथन करने के समय पालिसीधारी यह जानता था कि वह मिथ्या है या उसमें ऐसे तथ्य छिपाए गए हैं जिनको प्रकट करना तात्त्विक था :

परन्तु इस धारा की किसी बात से बीमाकर्ता किसी भी समय आयु का सबूत उस दशा में मांगने से निवारित नहीं होगा जब कि वह ऐसा करने का हकदार हो और किसी भी पालिसी की बाबत यह बात कि वह प्रश्नगत की गई है, केवल इस कारण नहीं समझी जाएगी कि पालिसी के निबन्धन बाद में यह साबित किए जाने पर कि जिस व्यक्ति के जीवन का बीमा किया गया है उसकी आयु प्रस्थापना में गलत बताई गई थी, ठीक कर दिए गए हैं।"

वह तारीख जब से दो वर्ष की अवधि की गणना की जाती है।

1.3 इस धारा में वर्णित दो वर्ष की अवधि इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व की गई पालिसी की दशा में 1 जुलाई, 1939 से शुरू होती है जो अधिनियम के प्रारम्भ की तारीख है और अन्य दशाओं में यह अवधि उस तारीख से शुरू होती है जिस तारीख को पालिसी की गई थी। व्यपगत पालिसी के पुनः प्रवर्तन की दशा में भी इस अवधि की संगणना उस तारीख से करनी पड़ती है जिस तारीख को पालिसी आरम्भ में की गई थी।[1]

जीवन बीमा निगम अधिनियम, 1956 का प्रभाव।

1.4 भारत सरकार ने भारत में जीवन बीमा कारबार का राष्ट्रीयकरण करने का विनिश्चय पालिसीधारकों को अपने जीवन बीमा के संरक्षण के मामले में पूर्ण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, बीमा का अधिक व्यापक रूप से, विशेषकर ग्रामीण

---

1. मिट्ठीलाल बनाम एल०आई०सी०, ए०आई०आर०, सुप्रीम कोर्ट, 8…

अधिकारी की किसी रिपोर्ट में या किसी दस्तावेज में किया गया कोई कथन गलत या मिथ्या है तब के सिवाय चुनौती नहीं दी जा सकती जब कि उसे प्रकट करना तात्त्विक था और वह कपटपूर्वक किया गया था और ऐसा कथन करने के समय पॉलिसीधारी यह जानता था कि वह मिथ्या है या उसमें ऐसे तथ्य छिपाए गए हैं जिनको प्रकट करना तात्त्विक था परन्तु इस धारा की किसी बात से बीमाकर्ता आयु का सबूत मांगने से या सही आयु के अनुसार प्रीमियम की दर ठीक करने से निवारित नहीं होता है।

अध्याय 2

बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 का विस्तार

धारा 45 का विस्तार।

2.1 इंग्लिश कामन लॉ के अधीन बीमा की संविदाएं परम विश्वास की संविदाएं या अत्यन्त सद्भाव की संविदाएं होती हैं जिनमें यदि बीमाकृत व्यक्ति ने गलत कथन किए हों या तथ्यों को छिपाया हो तो बीमाकर्ता कई वर्षों तक पालिसी के प्रवृत्त रहने पर भी संविदा को शून्य कर सकता है और तब सभी प्रीमियम बीमाकर्ता को समपहृत हो जाएंगे। बीमाकर्ता की यह पद्धति थी कि वह पालिसी में और प्रस्थापना के प्ररूप में ऐसा एक खण्ड रखता था कि उसमें कथन किए गए सभी उत्तर संविदा के आधार और संविदा के निबन्धनों के अन्तर्गत माने होते हैं। इसका परिणाम यह हुआ था कि इनमें कोई फेरफार, चाहे वह तात्त्विक हो या नहीं, और चाहे वह कितना भी मामूली हो, बीमाकर्ता को पालिसी शून्य कर देने का अधिकार प्रदान करता था। इससे बीमाकृत व्यक्ति को अत्यधिक हानि और कष्ट होता था और यदि उसकी मृत्यु हो जाती थी तो उसके विधिक प्रतिनिधियों को विशेषकर असहाय विधवाओं को अपार और भी अधिक हानि और कष्ट होता था। इसलिए यह धारा इस नियम का उपान्तरण करने के लिए और अत्यन्त सद्भाव के नियम को कम करने के लिए अधिनियमित की गई। बीमाकर्ता का यह संविदात्मक अधिकार कि उसे जब कभी कोई गलती या तथ्य को छिपाए जाने का पता चले तब वह दावे को निराकृत कर सकता है, निर्बन्धित कर दिया गया। यह धारा पालिसी की तारीख से दो वर्ष तक की अवधि के लिए बीमाकर्ता के अधिकार को प्रभावित नहीं करती है किन्तु उसके पश्चात् किसी पालिसी को इस आधार पर कि प्रस्थापना में या चिकित्सा

अध्याय 3

धारा 45 का लागू होना और उससे उत्पन्न होने वाली समस्याएं

न्यायिक विनिश्चय।

3.1. न्यायालयों के समक्ष जो मामले आए हैं उनको तीन प्रवर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् (क) जिन मामलों में पालिसी व्यपगत हो गई थी किन्तु उसे पुनर्जीवित किया गया था और पालिसी के पुनर्जीवन की तारीख से दो वर्ष के भीतर किन्तु मूल पालिसी की तारीख से दो वर्ष के पश्चात् बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हुई थी और दावे का निराकरण किया गया था (ख) जिनमें पालिसी की तारीख से दो वर्ष के भीतर बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हुई थी और दावे को भी उसी समय के भीतर निराकृत किया गया था और (ग) जिन मामलों में पालिसी की तारीख से दो वर्ष के भीतर बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हुई थी और पालिसी की तारीख से दो वर्ष से अधिक समय में दावे को निराकृत किया गया था। पालिसी की तारीख से दो वर्ष के पश्चात् मृत्यु होने वाले मामलों में कोई कठिनाई नहीं है क्योंकि धारा 45 लागू होगी और बीमाकर्ता के प्रश्न को बन्द करेगी।

प्रवर्ग (क)

3.2 पंजाब के एक मामले में[1] बीमाकृत व्यक्ति ने 1941 में दो पालिसियाँ लीं। ये दोनों पालिसियाँ 1947 में व्यपगत हो गईं और इन दोनों पालिसियों का पुनर्जीवन बीमाकृत व्यक्ति द्वारा अपने स्वास्थ्य के वैयक्तिक घोषणापत्र के आधार पर किन्तु चिकित्सीय जाँच या प्रमाणपत्र के बिना किया गया था। बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु 1949 में हो गई और बीमाकर्ताओं ने दावे को इस आधार पर निराकृत

---

1. ऊषा इंश्योरेंस कंपनी बनाम बाबा [illegible] ए.आई.आर. 1961 पंजाब 253

जीवन बीमा निगम और धारा 45

2.2 मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चयाधीन मामले[1] में जब जीवन बीमा निगम दावे को निराकृत करना चाहता है तब विद्वान् न्यायाधीशों में से एक न्यायाधीश ने निम्नलिखित विचार प्रकट किया था :-

> " जब कभी, न्यायालयों में दावों को निराकृत (खण्डन) किया जाता है या विवाद प्रस्तुत किए जाते हैं तब जीवन बीमा निगम को, मामूली गुंजाइश छोड़ने वाले ढंग पर विरोध नहीं करना चाहिए बल्कि यह उच्चतर स्तर के ढंग पर करना चाहिए जिससे कि जनता में यह विश्वास जागृत हो कि दावों का प्रतिरोध तुच्छ दलीलों और बिना सोचे विचारे अभिकथनों के आधार पर नहीं किया जा रहा है। किसी विशिष्ट दावे के सम्बन्ध में अन्वेषण के दौरान निगम द्वारा प्राप्त सभी सुसंगत सामग्री को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए जिससे कि न्यायालय सत्यता का निर्धारण करने में समर्थ हो सके। सभी वास्तविक साक्ष्य को निष्कपट रूप से और पूरी तरह प्रकट करना चाहिए और उसे छिपाने या रोक रखने का प्रयास नहीं करना चाहिए। "

अन्य न्यायालयों ने भी इसी प्रकार की टिप्पणियां की हैं।[2]

---

1. एल आई सी बनाम पद्मावती, ए आई आर मद्रास 357
2. दौलत राम बनाम भारत इन्श्योरेंस कम्पनी, ए०आई०आर० 1973 दिल्ली, 180, एल०आई०सी० बनाम शकुन्तला राव ए०आई० आर० आन्ध्र प्रदेश 68 और बी० नीलिमा पिल्लई बनाम एल आई सी ए० आई०आर० 1977 मद्रास 381.

" .... दो वर्ष की अवधि के भीतर, जो केवल उसी मिथ्या-व्यपदेशन को संविदा शून्य करने के लिए प्रतिवाद (बचाव) की दलील के रूप में स्वीकार करना चाहिए जो इस अर्थ में तात्विक हो कि उसका भारी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ प्रभाव पालिसी धारी के प्रत्याशित जीवन-काल पर पड़ता हो। इसमें कोई सन्देह नहीं कि धारा 45 में जो अतिरिक्त शर्तें इस अवधि के भीतर पूरी की जाने के लिए अधिकथित हैं उनको लागू करना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए यह अभिकथित करना बिल्कुल ही आवश्यक नहीं हो सकता कि पालिसी-धारी यह जानता था कि कथन मिथ्या था या उसने इसके बारे में अपनी जानकारी को कपटपूर्वक छिपाया था। किन्तु यदि विधि जिस रूप में इस समय है उसी रूप में रहने दी जाती है तो दो वर्ष की अवधि के भीतर कष्ट और अन्याय के ऐसे मामले उत्पन्न हो सकते हैं जिनका उपचार करने में न्यायालय असमर्थ होंगे क्योंकि वारण्टी का सिद्धान्त लागू होता रहेगा। मैं यह विचार भी प्रकट करना चाहता हूं कि चिकित्सीय विज्ञान के आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों के कारण, जिनके अन्तर्गत रोग सम्बन्धी (पैथालाजिकल) और एक्सरे जांच भी है, बीमा कम्पनियों के लिए सन्देह के मामलों में यह अधिकाधिक सम्भव होना चाहिए कि वे ऐसे तथ्यों और आंकड़ों से बीमाकृत व्यक्ति के प्रत्याशित जीवन-काल के बारे में अपना समाधान कर लें जिनका कोई सम्बन्ध उन बातों से नहीं है जो बीमाकृत व्यक्ति अपने स्वास्थ्य के बारे में कहता है।"

3.4 उच्चतम न्यायालय को इस धारा के विस्तार की जांच करने का अवसर मिला था[1]। इस मामले में पालिसी मार्च, 1945 में ली गई थी किन्तु वह 15 जनवरी, 1945 से प्रवृत्त होने वाली थी। बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु नवम्बर, 1946 में हो गई और

---

1. मिठूलाल बनाम एल० आई० सी० ए० आई० आर० 1962 सुप्रीम कोर्ट 814.

कहा जाता कि बीमाकृत व्यक्ति 1914 से [illegible] रोग से पीड़ित था। [illegible] अपीलार्थी [illegible] की [illegible] में [illegible] बीमाकृत व्यक्ति के पक्ष में वादी का डिग्री कर दी गई।

प्रश्न (ख)

3.3 इस मामले में बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु की [illegible] के आधार पर ली गई और दावे का निराकरण [illegible] के आधार पर किया गया। इन दोनों मामलों में न्याया-लयों ने परम विश्वास के सिद्धान्त को स्वीकार करते [illegible] मिथ्याकथन और उचित व्यवहार किए जाने पर जोर दिया है और इस बात पर ध्यान दिया है कि [illegible] की ओर से किसी व्यक्ति ने बीमाकृत व्यक्ति का ध्यान प्रस्थापना के प्रश्न में इन जटिल और संदिग्ध प्रश्नों की ओर आकृष्ट किया था और बीमाकृत व्यक्ति ने अपना उत्तर देने से पहले इन प्रश्नों को स्पष्ट रूप से समझ लिया था?[1]

[illegible] बनाम [illegible] मामले[2] में न्यायालय ने प्रत्यर्थी के दावे के निराकरण को इस आधार पर कायम रखा कि बीमाकृत व्यक्ति ने
21(2) [illegible] अपने [illegible] बारे में जानबूझकर मिथ्या व्यपदेशन किया था और बीमाकृत व्यक्ति ने यह प्रकट नहीं किया था कि वह रक्तिम रोग से पीड़ित था। [illegible] न्यायमूर्ति [illegible] ने अपने निर्णय में निम्नलिखित प्रकार प्रकट किया था :-

---

1. [illegible] बनाम अनुसूया बाई, ए०आई०आर० 1975 [illegible] 68

2. ए०आई०आर० 1960 मद्रास 474

पॉलिसी के समनुदेशिती के दावे का निराकरण 10 अक्तूबर 1947 को किया गया था । उच्चतम न्यायालय ने मामले के तथ्यों के आधार पर यह अभिनिर्धारित करते हुए कि पॉलिसी धारी तथ्यों को कपटपूर्वक छिपाने का दोषी था और प्रत्यर्थी ने दावे को उचित रूप से निराकृत किया था, निम्नलिखित प्रतिपादनाओं का अधिकथन किया था,-

(1) व्यपगत पॉलिसी के पुनःप्रवर्तन से हुई संविदा अन्य प्रयोजनों के लिए भी जारी है या नहीं ? धारा 45 के प्रथमवर्ती भाग के शब्दों से यह स्पष्ट है कि इस धारा के प्रयोजन के लिए दो वर्ष की अवधि की गणना उस तारीख से की जाना है जिस तारीख को पॉलिसी आरम्भ में की गई थी ।

(2) धारा 45 के दूसरे भाग के लागू होने के लिए निम्नलिखित बातें जरूरी हैं,-

(क) कथन बीमाकृत के किसी तात्त्विक तथ्य के बारे में होना चाहिए या कथन में अवश्य ही ऐसे तथ्यों को छिपाया गया हो जिनको प्रकट करना तात्त्विक था,

(ख) पॉलिसी धारक द्वारा तथ्यों को अवश्य ही कपटपूर्वक छिपाया गया हो, और

(ग) पॉलिसीधारी कथन करते समय यह अवश्य ही जानता हो कि [illegible] मिथ्या था या उस कथन में ऐसे तथ्यों को छिपाया गया था जिनको प्रकट करना तात्त्विक था ।

[illegible] के आधार पर उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर बीमा की रकम के लिए हकदार व्यक्तियों के दावों को [illegible] द्वारा निराकृत करना दोषपूर्ण था।

न्यू इंडिया इन्श्योरेन्स कं० बनाम कृष्णाबाई[1] में पॉलिसी 1949 में प्रारम्भ हुई। बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु 1952 में हुई और दावे को 1952 में निराकृत किया गया। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि बीमाकर्ता को उपयुक्त न्यायालय में बताए गए तथ्यों को अवश्य ही साबित करना पड़ेगा।

एल०आई०सी० बनाम शंकर अय्यर[2], एल०आई०सी० बनाम सुब्बम्मा[3] और मनोहर लाल बनाम एल०आई०सी०[4] में भी ऐसा ही अभि-निर्धारित किया गया था।

अतः धारा 45 के दूसरे भाग से बचने के लिए बीमाकर्ता को पॉलिसी के प्रारम्भ होने के समय से दो वर्ष के अंदर उक्त दशा में दावे को अस्वीकार अवश्य ही कर देना चाहिए क्योंकि बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु उक्त अवधि के भीतर हुई हो। विधि की ऐसी स्थिति से बीमाकर्ता को निम्नलिखित कठिनाईयाँ हो सकती हैं :-

(1) उसे बीमाकर्ता को दावे का निराकरण करने के लिए आवश्यक अन्वेषण करने के वास्ते पर्याप्त समय नहीं मिलता है,

(2) चतुर दावेदार बीमाकर्ता को जानकारी देने में दो वर्ष की अवधि का समय बीत जाने के लिए प्रतीक्षा कर सकता है, और

(3) बीमाकर्ता यह नहीं जान सकता है कि किसके दावे का निराकरण किया जाना चाहिए क्योंकि यदि बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हो गई है तो बीमाकर्ता को अवश्य ही इस बात की प्रतीक्षा करनी चाहिए और यह देखना चाहिए कि मृतक के सम्पदा का प्रशासनिक पत्र किसको प्रदत्त किया जाता है।

---

1. ए० आई० आर० 1962 असम 65
2. ए० आई० आर० 1963 मद्रास 32।
3. ए० आई० आर० 1971 आन्ध्र प्रदेश 41.
4. ए० आई० आर० 1971 दिल्ली 171

अध्याय 4

अन्य देशों में स्थिति

यूनाइटेड किंगडम में स्थिति

4.1 जहाँ तक यूनाइटेड किंगडम का संबंध है वहाँ स्थिति यह है कि यद्यपि विश्वास के सिद्धांत का कड़ाई से पालन किया जाता है किन्तु न्यायालय दावेदारों को मदद करने के लिए सीमावर्ती पर इस बात के लिए और उसमें रीति का औचित्यपूर्ण और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करें ।

आस्ट्रेलिया में स्थिति ।

4.2 आस्ट्रेलिया लाइफ इन्श्योरेन्स ऐक्ट 1945-61 की धारा 84 में यह उपबंधित है कि पालिसी जो [जिस व्यक्ति के जीवन का बीमा किया गया है उसकी आयु के बारे में कथन से भिन्न] किसी ऐसे गलत कथन के एकमात्र कारण से, जो किसी प्रस्थापना या अन्य दस्तावेज में उस विश्वास पर किया गया हो जिस विश्वास पर कंपनी द्वारा पालिसी दी गई थी या पुनः प्रारंभ की गई थी, तभी शून्य किया जाएगा जब कि वह कथन -

[क] कपटपूर्ण असत्य था, या

[ख] पालिसी के अधीन कंपनी के दावे के संबंध में ऐसा तात्विक कथन रहा हो जो उस तारीख से, जिस तारीख को पालिसी को शून्य करना चाहा गया है या जिस व्यक्ति के जीवन का बीमा किया गया है उस व्यक्ति की मृत्यु जिस तारीख को हुई है उस तारीख से इनमें से जो भी तारीख पूर्वतर हो, उस तारीख से ठीक तीन वर्ष पूर्ववर्ती अवधि के भीतर किया गया था

समस्याएं

3.5 अब हम निम्नलिखित रूप में समस्याओं का निकट से अध्ययन कर सकते हैं :-

(1) जब बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु पालिसी के प्रवृत्त होने की तारीख से दो वर्ष के भीतर हो जाती है तब क्या बीमाकर्ता को अन्वेषण करने के लिए कुछ समय दिया जाना चाहिए जिससे कि वह धारा 45 की द्वितीय शर्तों को पूरा करने के दायित्व के अधीन रहे बिना पालिसी की तारीख से दो वर्ष के पश्चात दावे को निराकृत करने में समर्थ हो सके ?

(2) जब बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु पालिसी की तारीख से दो वर्ष के भीतर हो जाती है और उसी अवधि के भीतर दावे का निराकरण भी किया जाता है तब क्या बीमाकर्ता परम विश्वास के सिद्धांत का अवलंबन ले सकता है या क्या बीमाकर्ता को केवल तात्विक मिथ्या व्यपदेशनों का निराकरण करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए ?

अध्याय 3

कार्य संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचनाएं

संचालन
कार्य/संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचनाएं ।

3.1 आयोग ने विचाराधीन विषय के संबंध में तैयार किए गए कार्य संचालन पत्र को मार्च, 1985 में विभिन्न व्यक्तियों और निकायों के पास परिचालित किया था जिनमें भारतीय जीवन बीमा निगम, राज्य सरकारें, उच्च न्यायालय और विधिज्ञ-संगम [बार एसोसिएशन] भी हैं । उनसे 15 अप्रैल, 1985 तक आलोचनाएं भेज देने के लिए अनुरोध किया गया था । 1 जून, 1985 तक प्राप्त सभी आलोचनाएं भेज देने के लिए अनुरोध किया गया था । 1 जून, 1985 तक प्राप्त सभी आलोचनाओं पर आयोग के विचारों को अंतिम रूप देने से पहले विचार किया गया है ।

यह भी उल्लेख कर देना चाहिए कि एक संगम [एसोसिएशन] ने बहुत जानकारी देने वाले विचार प्रकट किए हैं । उक्त एसोसिएशन ने इस विषय में जो रुचि दर्शित की है उसके लिए आयोग उसकी सराहना करना चाहता है[13] और कार्य संचालन पत्र के बारे में जिन्होंने आलोचनाएं भेजी हैं उनके प्रति आयोग अपना आभार भी प्रकट करना चाहता है ।

जहां तक आलोचनाएं प्राप्त करने की बात का संबंध है निम्नलिखित व्यक्तियों/निकायों ने कार्यसंचालन पत्र के बारे में अपनी आलोचनाएं भेजी हैं :-

[क] दो उच्च न्यायालय ।[14]

[redacted]

---

13. विधि आयोग की फाइल सं० 2[2]/85 एल०सी० क्रम सं० 13[आर] और 22 [आर]
14. विधि आयोग की फाइल सं० एफ 2[2]/85 एल०सी० क्रम सं० 16[आर] और 24[आर]

14[क] विधि आयोग की फाइल सं०एफ2[2]/85-एल०सी० क्रम सं० 24[आर]

14[ख] विधि आयोग की फाइल सं०एफ2[2]/85-एल०सी० क्रम सं० 16 [आर]

अतः यदि बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु पालिसी की तारीख से तीन वर्षों के भीतर हो जाती है और पालिसी किसी गलत कथन के आधार पर दी गई थी तो इस कथन [illegible] के करने के लिए तारीख था तो पालिसी पर आधारित कोई दावा अस्वीकार्य किसी भी समय निराकृत किया जा सकता है।

इंग्लैंड में स्थिति।

4.3 इंग्लैंड में विवादरहित शर्तों की पालिसी में रहने की पद्धति अपनायी जाती है। कुछ राज्यों में ऐसी शर्तों को कानून द्वारा अधिरोपित किया गया है। इन शर्तों का प्रभाव यह है कि कुछ अवधि के पश्चात् पालिसी का प्रतिवाद नहीं किया जा सकता और इसे की गलती या अशुद्ध कथन के किसी आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती। यदि मृत्यु प्रतिवाद-योग्य अवधि के दौरान हो जाती है तो पालिसी पर आधारित किसी दावे को गलती या अशुद्ध कथन के आधार पर किसी भी समय चुनौती दी जा सकती है किन्तु कि बीमाकर्ता का निराकृत करने का अधिकार इस तथ्य पर निर्भर नहीं करता कि किस समय पर निराकरण किया जाता है।

एक राज्य सरकार ने[19] बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 के संशोधन की बात के लिए आयोग द्वारा की गई सिफारिश का समर्थन किया है और यह कहा है कि यदि विधि को उसी रूप में रखा है जिस रूप में यह ओवर-स्टेटमेंट [illegible] है तो दो वर्षों की अवधि में कष्ट और अन्याय के मामले उत्पन्न हो सकते हैं और प्रशासनिक उपचार करने में असमर्थ होंगे।

एक दूसरी राज्य सरकार[20] विधि आयोग के सुझाव से इस कारण सहमत नहीं है क्योंकि उसके विचार के अनुसार प्रस्तावित संशोधन से असम्यक कठोर और अत्यन्त विकट परिणाम यह होगा कि कपट के अनेक मामलों में बीमाकर्ता के साथ अन्याय हो जाएगा।

एक व्यक्ति[21] ने सुझाव दिया है कि तीन वर्ष की अवधि की बजाय दो वर्ष की अवधि पर्याप्त है अधिक है जिस अवधि के पश्चात जीवन बीमा किया जाने की परिस्थिति में दावों को निराकृत नहीं कर सकता।

एक अन्य व्यक्ति ने[22] इस कार्य संशोधन पर के बारे में कोई विनिर्दिष्ट आलोचना नहीं की है।

---

19. विधि आयोग की फाइल सं0एफ2(2)/83-एल0सी0 क्रम सं0 [illegible] 19 (आर)
20. विधि आयोग की फाइल सं0एफ2(2)/83-एल0सी0 क्रम सं0 18 (आर)
21. विधि आयोग की फाइल सं0एफ2(2)/83-एल0सी0 क्रम सं0 21 (आर)
22. विधि आयोग की फाइल सं0 एफ 2(2)/83-एल0सी0 क्रम सं0 21 (आर)

[ख] राज्य सरकारें ।[15]

[ग] एक अनुसंधान संस्था ।[16]

[घ] दो व्यक्ति ।[17]

[ङ०] भारतीय जीवन बीमा निगम।[23]

एक उच्च न्यायालय ने[14][क] विधि आयोग के इस सुझाव से सहमति प्रकट की है कि धारा 49 की पुनर्विचार इस आधार पर की आवश्यक उस धारा का अंत पुनर्विलोकन करने का प्रस्ताव किया गया है उससे सीमावर्ती धारा सीमाकृत व्यक्ति के विनिर्णय वादों को पुनः करने का विस्तार कम हो ही जाएगा ।

किन्तु दूसरे उच्च न्यायालय से प्राप्त उत्तर में यह उल्लेख किया गया है कि न्यायाधीशों की कोई आलोचना नहीं करनी है।[14][ख] चार राज्य सरकारों ने[18] आयोग के सुझाव से सहमति प्रकट की है ।

---

15. विधि आयोग की फाइल सं० एफ[2]/85-एल०सी०
क्रम सं० 12[आर], 15[आर], 16[आर], 19[आर], 23[आर] और 22[आर]

16. विधि आयोग की फाइल सं० एफ[2]/85-एल०सी०
क्रम सं० 13[आर] और 22[आर]

17. विधि आयोग की फाइल सं० एफ 2[2]/85-एल०सी०
क्रम सं० 17[आर] और 21[आर]

18. विधि आयोग की फाइल सं० एफ[2]/85-एल०सी०
क्रम सं० 12[आर] 15[आर] क्रम 23[आर] और 27[आर] ।

जाने कि बीमाकृत व्यक्ति को दस वर्ष तक की अवधि के लिए अभिवचनों की निश्चितता से वंचित किया जाए। अतः आयोग यह महसूस करता है कि अपनी सिफारिशों में कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है।

अध्याय 6

सिफारिशें

सिफारिशें।

6.1 पूर्ववर्ती अध्यायों में उल्लिखित सामग्री के आधार पर हम इस विचाराधीन विषय के बारे में अपनी सिफारिशें कर रहे हैं। धारा 45 की पुनर्रचना इस प्रकार होनी चाहिए कि बीमाकृत व्यक्ति या दावेदार के अधिकार को कुछ आधारों पर चुनौती दिए जाने से संरक्षण प्रदान किया जाए और जीवन बीमा निगम पॉलिसी निराकृत करने का अधिकार कुछ अन्य आधारों पर दिये और इस प्रकार इन दोनों अधिकारों में समन्वय हो अर्थात् बीमाकृत व्यक्ति या दावेदार के अधिकार और जीवन बीमा निगम के अधिकार में समन्वय हो।

45 की पुनर्रचना प्रकार की जानी है।

6.2 हम यह सिफारिश करते हैं कि बीमा अधिनियम, 1938 की धारा 45 की पुनर्रचना निम्नलिखित रूप में होनी चाहिए :-

"धारा 45. कुछ दशाओं के आधार पर किसी पॉलिसी पर तीन वर्ष के पश्चात् आक्षेप न किया जाना -

(1) किसी भी जीवन पॉलिसी पर उस तारीख से, जिसको वह की गई है, या जब वह किसी कारण से व्यपगत हो जाने के पश्चात् पुनः प्रवर्तित की गयी तब उस तारीख से, जिसको वह इस प्रकार पुनः प्रवर्तित की गई है, तीन वर्ष की समाप्ति के पश्चात् आक्षेप नहीं किया जाएगा।

भारतीय जीवनबीमा निगम 23 ने अपने अभ्यावेदन में यह सुझाव दिया है कि यदि मृत्यु पालिसी की, या उसके पुनःप्रवर्तन की तारीख से तीन वर्ष के भीतर हो जाती है तो कुछ बातों के आधार पर निराकृत करने का अधिकार मृत्यु की सूचना देने की तारीख से एक वर्ष की अवधि के लिए उपलब्ध होना चाहिए। कपट के मामलों में सुझाव दिया गया है कि उसे पांच वर्षों की अवधि तक में पालिसी पर आक्षेप करने का अधिकार होना चाहिए और यदि पालिसी 6 से 8 वर्ष तक की अवधि तक आक्षेप किए बिना निरंतर प्रवृत्त रही है [अर्थात 6 से 8 वर्ष तक उस पर आक्षेप नहीं किया गया है और वह निरंतर इतनी अवधि तक प्रवृत्त रही है] तो यह समझा जायगा कि जीवन बीमा निगम ने उस पालिसी को किसी भी आधार पर निराकृत करने के अपने अधिकार का अधित्यजन कर दिया है।

आयोग ने उन विभिन्न मामलों को ध्यान में रखते हुए, जिनका उल्लेख इस रिपोर्ट में पहले ही किया गया है, जीवन बीमा निगम के सुझाव पर सावधानी से विचार किया है। आयोग अनेक उच्च न्यायालयों द्वारा प्रकट किए गए उन विचारों को कि जीवन बीमा निगम को मामूली मुकदमा लड़ने वालों की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिए और दावों को निराकृत करने के लिए प्राविधिक [तकनीकी] की तुच्छ दलीलें पेश नहीं करनी चाहिए, दृष्टिगत रखते हुए तथा बीमाकृत व्यक्तियों और दावेदारों के हितों के लिए यह महसूस करता है कि जीवन बीमा निगम को दावों का निराकरण करने के लिए इतनी लम्बी अवधि नहीं देनी चाहिए और तीन वर्ष की जिस अवधि की सिफारिश की गई है वह जीवन बीमा निगम द्वारा समुचित अन्वेषण करने के लिए पर्याप्त रूप से लम्बी अवधि है बजाय

([illegible])
अध्यक्ष हस्ता०

([illegible])
सदस्य हस्ता०

([illegible])
सदस्य हस्ता०

([illegible])
श्री कार्तिक सदस्य हस्ता०

([illegible])
सदस्य सचिव हस्ता०

तारीख 6 जून, 1985

(ख) किसी जीवन बीमा पालिसी पर, यथास्थिति, उस तारीख से, जिसको वह दी गई है या उस तारीख से, जिसको वह पुनः प्रवर्तित की गई है, तीन वर्ष के भीतर किसी भी समय इस आधार पर आक्षेप किया जा सकता है कि कोई कथन, जो बीमाकृत व्यक्ति के प्रस्थापित जीवन-काल के बारे में तात्त्विक कथन है, उस प्रस्थापना या अन्य दस्तावेज में, जिसके आधार पर पालिसी दी गई थी या पुनः प्रवर्तित की गई थी, गलत कथन किया गया था ।